ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 173-175

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- I, Issues-23, YEAR- Jan.-March-2022

जनपद प्रतापगढ़ में वन विनाश का पर्यावरण पर प्रभाव

डॉ० हेमा पाण्डेय

भूगोल, सिंगरामऊ, जौनपुर (उ0प्र0) भारत

Received- 26 .02.2022, Revised- 02.03.2022, Accepted - 05.03.2022 E-mail: hema.singramau@gmail.com

सारांशः – *अध्ययन क्षेत्र– जनपद प्रतापगढ़ उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग में 25°34/ उत्तरी अक्षांश से 26°11/ उत्तरी अक्षांश तथा 81°19/ पूर्वी देशांतर से 82°27/ पूर्वी देशांतर के मध्य विस्तृत है। इस जनपद का क्षेत्रफल 3,717 वर्ग किमी० है। पूर्व से पश्चिम इसकी लंबाई 110 किमी० एवं उत्तर से दक्षिण इसकी लंबाई 50 किमी० है। जिले के उत्तरी भाग में सई नदी प्रवाहित होती है। अन्य नदियों में गंगा, लोनी, पीली, गोमती, बकुलाही, रखहा आदि नदियाँ है। इसके अतिरिक्त यहाँ जल के अनेक .त्रिम स्रोत हैं। इसके उत्तर दिशा में सुल्तानपुर, पूर्व दिशा में जौनपुर, दक्षिण दिशा में प्रयागराज एवं पश्चिम दिशा में रायबरेली जनपद है। जनपद में 45.54: लोग .षि पर आधारित हैं। जनपद में कुल 5 तहसीलें – सदर, कुंडा, लालगंज, पट्टी, रानीगंज और कुल 17 विकासखंड– प्रतापगढ़ सदर, संडवा चंद्रिका, कुंडा, विहार, पट्टी, आसपुर देवसरा, मानधाता, मंगरौरा, लक्ष्मणपुर, लालगंज, बाबागंज, कालाकांकर, गौरा, शिवगढ़, सांगीपुर, रामपुर संग्रामगढ़ तथा बाबा बेलखरनाथ है।*

कुंजीभूत शब्द– वन विनारा, ईश्वर का अवतार, उत्तराधिकार, स्वस्थ विकास, कंदमूल, बहुउद्देशीय नदी, वृक्षारोपण।

वन विनाश का पर्यावरण पर प्रभाव– पर्यावरण के सम्बंध में वनों और पेड़ों का बहुत महत्व है। प्राचीन काल से ही भारत में वृक्षों की अत्यधिक उपयोगिता को स्वीकार कर और मानवीय भावनाओं के वशीभूत होकर उन्हें ईश्वर का अवतार माना गया है। वृक्षों की पूजा करना यह कर्तव्य हमें उत्तराधिकार में मिला है। अपने घर के दरवाजे पर, अपने आँगन में, लान में, बुर्ज एवं टेरस हर जगह हम हरियाली देखना पसंद करते हैं। सहज ही हमने तुलसी के चौरे को अपने घरों के आँगन में स्थापित नहीं कर दिया है। सबके पीछे वैज्ञानिक सत्य है। मत्स्य पुराण में भी कहा गया है कि– "एक पुत्र दस तालाबों के बराबर होता है और एक वृक्ष दस पुत्रों के बराबर।" वास्तव में प्रकृति हमारी संरक्षक है, पोषक है। स्वस्थ विकास के लिए हमें प्रकृति की मूल सम्पदा को बचाये रखना होगा।

अतः 'वनों को विश्व का फेफड़ा' कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं है क्योंकि जैव मण्डल में पाये जाने वाले समस्त जीव–जंतुओं की श्वसन क्रिया के लिए शुद्ध ऑक्सीजन की पूर्ति वनों द्वारा होती है। मनुष्य अपने लाभ के लिए वनों को विनष्ट करना प्राचीन काल से ही शुरू कर दिया, जब से उसने आग का उपयोग करना सीख लिया। जब मनुष्य अन्य जानवरों की तरह मात्र कंदमूल फल का उपयोग करता था तब उस समय वनों की प्रधानता थी परंतु बाद में मनुष्य जंगली जानवरों से स्वयं की रक्षा, शिकार करने तथा खेती करने के लिए वनों में आग जलाने लगा। इस तरह अपने उपयोग के लिए मनुष्य वनों का विनाश करना प्रारम्भ कर दिया। परंतु उस समय तक जनसंख्या, उद्योग एवं नगरों की संख्या कम होने के कारण वनों पर कोई कुप्रभाव नहीं पड़ा। 19वीं शताब्दी में औद्योगिक क्रांति का असर पूरे विश्व में पड़ने लगा, मनुष्यों द्वारा वन विनाश का कार्य और भी तेजी से शुरू हो गया जिससे मनुष्यों का वनों पर दबाब बढ़ने लगा। वन विनाश के कई कारण हैं जैसे– बढ़ती जनसंख्या का दबाब, मनुष्य की विलासिता की प्रवृत्ति, औद्योगिक क्रांति, बहुउद्देशीय नदी–घाटी परियोजनाओं का कार्यान्वयन आदि।

इसका मूल कारण बढ़ती जनसंख्या का दबाव और उसके साथ ही निरन्तर बढ़ते पशुधन को ही स्वीकार करना होगा। मनुष्य भोजन पकाने के लिए ईंधन तथा शवदाह के लिए वन काटना शुरू किया तथा पशुओं के चारे के लिए भी जंगल साफ करने लगा। जितने वन कटे, उस अनुपात में वृक्षारोपण नहीं हुआ और परिणाम यह निकला कि वन क्षेत्रों का निरन्तर ह्रास होता रहा।

दूसरे स्थान पर मनुष्य की विलासिता की प्रवृत्ति की वजह से भी वनों का विनाश हुआ। आधुनिक समय में इमारती लकड़ियों को काटकर फर्नीचर तथा अन्य सुख–सुविधा के लिए सामानों का निर्माण किया जाने लगा जिससे वनों को नष्ट किया जाने लगा। मनुष्य इस आधुनिकता की दौड़ में एक–दूसरे से ज्यादा शान शौकत दिखाने के लिए भी लकड़ी के ज्यादा से ज्यादा सामानों को एकत्र करने लगा जिससे इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भी वनों को नष्ट किया जाने लगा है।

जनसंख्या की वृद्धि होने के कारण मनुष्यों के भोजन की आवश्यकता की पूर्ति के लिए वनों को काटकर खेत बना दिये गये। पानी की कमी की पूर्ति के लिए बाँध बनाये गये, अनेक जंगल समाप्त कर दिये गये। बढ़ी हुई आबादी के लिए मकान या आवास की आवश्यकता हेतु गाँव एवं कस्बे के आस–पास के वृक्षों को काट दिया गया। इस प्रकार वन विनाश का कार्य

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- I, Issues-23, YEAR- Jan.-March-2022

निरन्तर बढ़ता गया।

वन क्षेत्रों के विनाश के लिए देश की औद्योगिक क्रान्ति भी कम जिम्मेदार नहीं है। एक ओर जहाँ कारखाने चलाने के लिए ईंधन के रूप में वनों का इस्तेमाल हुआ वहीं कच्चे माल के लिए जंगल काम आये। खेल का सामानए बच्चों के खिलौने, रेल के स्लीपर और डिब्बे, कृषि के औजार, गाँवों में खेती के लिए हल और अनाज ढोने की गाड़ियाँ, शहरों में धनी लोगों के लिए ड्राइंगरूमों की साज–सज्जा, बनावटी दीवारें, छतों, दरवाजों आदि के लिए लकड़ी का प्रयोग होने लगा जिससे वनों का ह्रास होने लगा।

बहु–उद्देशीय नदी–घाटी परियोजनाओं के कार्यान्वयन के समय विस्तृत वन–क्षेत्र का क्षय होता है, क्योंकि बांधों के पीछे निर्मित वृहद् जलभण्डारों में जल के संग्रह होने पर वनों से आच्छादित विस्तृत भूभाग जलमग्न हो जाता है जिससे न केवल प्राकृतिक वन सम्पदा–समूल नष्ट होती है, वरन् उस क्षेत्र का पारिस्थितिकीय सन्तुलन ही बिगड़ जाता है।

वन विनाश से पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। वन पर्यावरण के अति महत्वपूर्ण संघटक हैं जो जैवीय परंपरा को बनाए रखते हैं। वन न केवल एक संसाधन है अपितु जीवन संचालन के आधारी पक्ष है, इसीलिए वृक्षों को देवता कहा गया है अर्थात ये हमारे रक्षक है। इनका अभाव होना ही पर्यावरणीय संकट को निमंत्रण देना है। इनके अभाव में न तो मौसम और जलवायु व्यवस्थित रह सकता है, न तो वन जीवों का अस्तित्व ही सम्भव है और न ही मनुष्यों को शुद्ध ऑक्सीजन प्राप्त हो सकता है। वन भूतल के लिए प्राकृतिक छतरी का कार्य करते हैं। वन मानव द्वारा निकाले गये कार्बन डॉई ऑक्साइड तथा कारखानों से निकले कार्बन डॉई ऑक्साइड को आत्मसात् कर वायुमण्डल के हरितगृह प्रभाव को कम करते हैं। साथ ही साथ वर्षा जल बूँदों के प्रहार से भूतल की रक्षा करके भूमि अपरदन को कम करते है। परन्तु जिस तरह से वनों का विनाश हो रहा है अगर ऐसा होता रहा तो भूतल पर वनों का अभाव हो जाएगा। वनों के अभाव से मानवजनित कार्बन डॉई ऑक्साइड की अतिरिक्त मात्रा का अवशोषण नहीं हो पायेगा, जिस कारण वायुमण्डल में कार्बन डॉई ऑक्साइड की मात्रा में निरन्तर वृद्धि होने के कारण हरितगृह प्रभाव में वृद्धि होगी जिससे पृथ्वी एवं वायुमण्डल का ऊष्मा सन्तुलन अव्यवस्थित हो जायेगा। वन–विनाश के कारण वर्षा की बूँदे अत्यधिक तेजी से पृथ्वी पर आएगी जिससे मृदा का अपरदन बढ़ जाएगा। मृदा अपरदन में वृद्धि के कारण नदियों के अवसाद–भार में वृद्धि हो जाती है जिससे नदियों की तली का तेजी से भराव होने लगा है। इस प्रक्रिया के कारण नदियों में जलधारण क्षमता कम होने से बाढ़ का प्रकोप बढ़ सकता है। वन विनाश जिस निर्ममता से किया गया है उसके कुप्रभाव भी उतने ही भयानक हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि पर्यावरण के कुछ तत्व पंगु बनने के नजदीक है या पंगु बन चुके हैं। वन विनाश के कारण वायु–अपरदन एवं मरुस्थलों के विस्तार में वृद्धि हो जाती हैं।

वन विनाश से कई प्रकार की पर्यावरणीय कठिनाइयां मानव के समक्ष उपस्थित हो रही है जैसे – भूमि अपरदन में वृद्धि, मिट्टी की उर्वराशक्ति का ह्रास, परिस्थितिकीय तंत्र में असंतुलन, वनोत्पादन का अभाव, मानवता को खतरा, इमारती व जलाऊ लकड़ी का अभाव, वन्य जीवों का अस्तित्व संकट में, आर्थिक साधनों का दुरुपयोग, ग्रीन हाउस प्रभाव, तापमान वृद्धि, अम्ल वर्षा, मरुभूमि का विस्तार, कार्बन डाई ऑक्साइड की मात्रा में वृद्धि, ऑक्सीजन की कमी,जलवायु परिवर्तन, भू–स्खलन में वृद्धि, नदियों का जलस्तर गिरना, जलाभाव, जल स्रोतों का सूखना और वृक्ष जातियों और वनस्पतियों का विनाश आदि। वन विनाश के कारण यदि अति क्रूर है तों उसके परिणाम अति भयानक। इनसे निपटना ही होगा। वन विनाशियों से दो–दो हाथ करना ही होगा, अन्यथा वे हमारी स्थिति 'जल बिन मीन पियासी' की कर देंगे।

आलोच्य क्षेत्र जनपद प्रतापगढ़ में भी वनों की मात्रा में लगातार कमी हो रही है। राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार मैदानी क्षेत्रों में भौगोलिक क्षेत्रफल का कम से कम 20% वनों से आच्छादित होना चाहिए परंतु इस क्षेत्र में स्थिति अत्यंत गंभीर है। यहाँ भौगोलिक क्षेत्रफल का मात्र 2.29% ही वनों के अंतर्गत है। इसका प्रमुख कारण ग्रामीण क्षेत्रों में निजी वनों तथा बागों का भारी मात्रा मे कटान है जिसके कारण न केवल जनसाधारण को अपनी दैनिक आवश्यकताओं– ईधन, चारा, पत्ती, प्रकाष्ठ, फल व कच्चे माल की पूर्ति में भारी कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है, बल्कि इस क्षेत्र के पर्यावरण का संतुलन भी बिगड़ रहा है तथा भूक्षरण की गति तीव्र हो गयी है। प्रतापगढ़ वन प्रभाग के सम्पूर्ण क्षेत्र में ऊसर एवं बंजर भूमि पर उग रहे झाड़ी वन ही विद्यमान हैं। यहाँ प्राकृतिक वन नगण्य हैं। वन क्षेत्र अत्यधिक कम होने के कारण ये वन विगत दशकों से ही चराई साख तरासी तथा विवेकपूर्ण कटान से बुरी तरह प्रभावित हुए हैं जिसके कारण भूखंड वृक्षों के दृष्टिकोण से नग्न प्रतीत होते हैं। प्राकृतिक वनस्पति प्रायः समाप्त हो गयी है और कहीं पर है तो नाम मात्र की रह गयी है जिससे पर्यावरण असंतुलन हो रहा है।

भूमि से वानस्पतिक आवरण हट जाने व उचित प्रबन्ध के अभाव में ऊसर भूमि के क्षेत्रफल में निरंतर विस्तार होता जा रहा है।इस समय इस प्रभाग में लगभग 9244 हेक्टेयर भूमि ऊसर की श्रेणी मे आती है। इन समस्याओं का निदान करने के लिए यह परम आवश्यक है कि वर्तमान वानस्पतिक आवरण एवं वन क्षेत्र को पूर्ण संरक्षण प्रदान किया जाय।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- I, Issues-23, YEAR- Jan.-March-2022

जनपद प्रतापगढ़ में गंगा एवं सई नदी के किनारे पाये जाने वाले वन अधिकांशतः समाप्त हो गए है। वन के स्तर में इतनी कमी के बावजूद बहुत से वन पशुओं के चराई के लिए खुले हुये है। जिससे भूमि की ऊपरी सतह टूट कर बहती है और वनों का विनाश होने लगता है। इस प्रकार के हो रहे विनाश को, अच्छी घास पाने की प्रत्याशा में ग्रामवासियों द्वारा वनों में लगाई जाने वाली आग से और भी गति मिलती है। इस जनपद के क्षेत्रों का भ्रमण करने से ज्ञात होता है कि नदियों द्वारा अपरदन होने से भूक्षरण अधिक हुआ है और परिणामस्वरूप भूमि गोलाश्म युक्त होने के कारण खेती के लिए पूर्णतया अयोग्य हो गयी है। बाढ़ तथा कटाव के विनाशकारी प्रभाव के परिणामस्वरूप विगत 500 वर्ष में प्रतापगढ़ में नदियों का तल तथा साथ ही जल स्तर 60 फुट नीचे हो गया है, शीत ऋतु में जनपद में नदियों के पानी का स्तर आस–पास के क्षेत्रों की तुलना में 180 से 200 फीट नीचे पाया गया हैं। यही स्थिति कुओं के जल स्तर की है और वह बहुधा 200 फीट नीचे गिर जाता है। इस क्षेत्र में नदी के तट अधिकांशतः वृक्ष विहीन हो गए है। कुछ वनस्पतियाँ ही अवशेष रूप में मिलती है। जो वर्तमान में और भी तेजी से विलुप्त होती जा रही है।

अतः नदी के तट पर रक्षात्मक वनस्पतियों का अभाव हो गया है और बीहड़ निर्माण अधिक हुआ है। बीहड़ क्षेत्रों मे जल स्तर इतना गिर गया है कि ग्रामवासियों को पानी की तलाश में भटकना पड़ता है। अतः वृक्षारोपण करके ही हम इसका निदान कर सकते है।

पर्यावरण विशेषज्ञों के अनुसार पर्यावरण संतुलन के लिए पृथ्वी के 33% हिस्सों पर वनॉ का होना आवश्यक है । सरकार ने 2012 तक 33% वन क्षेत्र पूरा करने का लक्ष्य रखा था लेकिन यह लक्ष्य पूरा नहीं हो पाया। भले ही कारण जो हो पर्यावरण से जुड़े जानकार मानते है कि अगर राज्य में कोशिश की जाय तो समस्त विकास के साथ जंगल का अधिकतम औसत 46% तक किया जा सकता है। लेकिन स्थिति उलट है, जितने वन लग नहीं रहे उतने वन कटते जा रहे है। इसके निदान के लिए हमें जन जागरण अभियान शुरू करना होगा। पर्यावरण संरक्षण के लिए प्रत्येक व्यक्ति को समाज, देश, पृथ्वी और पर्यावरण के प्रति अपने कर्तव्यों को समझना पड़ेगा। मनुष्य का जीवन पेड़ों पर निर्भर है और पेड़ों का जीवन मनुष्य पर, इसीलिए संरक्षण के प्रति नयी चिंतनधारा को विकसित करने की जिम्मेदारी केवल मनुष्य के जिम्मे है, केवल और केवल मनुष्य के जिम्मे।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. Singh, Savindra(1999): Environmental Geography. Prayag Pustak Bhawan Allahabad.
2. Singh, Savindra(1993): Environmental Geography. Prayag Pustak Bhawan Allahabad.
3. Singh, Jagdish,(1997): Environmental Management & Eco-Development.
4. Stanley, C.A.(1966) Man and his Environment, Population Bulletin, Vol.-22, No.4
5. Sharma, R.C.(1975): Population, Resource and Environment: A Hand Book of Population Geography.

*****